Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2023 GISRRJ | Volume 6 | Issue 2 | ISSN : 2582-0095

मारवाड़ के शिलालेखों में आर्थिक चिंतन

डॉ. रेखा गुप्ता
सीनियर रिसर्च फेलो (ICSSR)
मो.ला. सु. विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान

Article Info
Volume 6, Issue 1
Page Number : 17-23

Publication Issue :
March-April-2023

Article History
Accepted : 01 April 2023
Published : 10 April 2023

शोधसारांश - पुरुषार्थ चतुष्टय में अर्थ का स्थान द्वितीय है किंतु व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाए तो अन्य तीनों पुरुषार्थ धर्म, काम तथा मोक्ष की सिद्धि अर्थ के अभाव में संभव नहीं है। अत: अर्थ प्रमुख पुरुषार्थ है। अर्थ जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन है तथा अर्थ के बिना जीवन यात्रा असंभव है। अर्थ के बिना मानव का अस्तित्व ही नहीं है। मारवाड़ से प्राप्त शिलालेखों से तत्कालीन आर्थिक स्थिति का अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है। कृषि, पशुपालन तथा उद्योग- धंधे आय का प्रमुख स्रोत होते थे। इनमें भी कृषि आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार थी I

मुख्य शब्द – अर्थ, मारवाड़, शिलालेख, कृषि, उद्योग, व्यापार, कर व्यवस्था, मुद्रा I

अर्थार्थं प्रवर्तते लोक: अर्थात संपूर्ण विश्व अर्थ हेतु प्रवृत्त है। पुरुषार्थ चतुष्टय में अर्थ का स्थान द्वितीय है किंतु व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाए तो अन्य तीनों पुरुषार्थ धर्म, काम तथा मोक्ष की सिद्धि अर्थ के अभाव में संभव नहीं है। अत: अर्थ प्रमुख पुरुषार्थ है। अर्थ जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति का साधन है तथा अर्थ के बिना जीवन यात्रा असंभव है। अर्थ के बिना मानव का अस्तित्व ही नहीं है। भारतीय अर्थ चिंतन के प्रारंभिक बीज हमें वैदिक साहित्य में प्राप्त होते हैं I वैदिक संहिताओं में अनेक मंत्रों में विभिन्न देवी-देवताओं से धन प्राप्ति की कामना की गई है। अग्नि देवता से धन प्राप्ति की कामना करता हुआ यजमान कहता है- **अग्निना रयिमश्नवत पोषमेव दिवे दिवे यशसं वीरवंतम् ।**[1] पृथ्वीसूक्त में पृथ्वी को आनंदप्रदात्री, धनप्रदात्री, विश्व का भरण-पोषण करने वाली तथा संसार के समस्त ऐश्वर्य प्रदान करने वाली कहा गया है।[2] वैदिक अर्थ चिंतन में अर्थ शुचिता को सर्वोपरि माना गया है। ऋग्वेद में स्पष्ट उल्लेख है कि द्यूत आदि अनैतिक साधनों से धनार्जन नहीं करना चाहिए अपितु कृषि कर्म से धनार्जन करना चाहिए-

अक्षैर्मादीव्य: कृषिमित् इति कृषस्व वित्ते रमस्व बहुमन्यमाना: I [3]

उपनिषदों में भी जहां एक और धनवान तथा संपत्तिशाली बनने की कामना की गई है,[4] वहीं दूसरी ओर धन का लोभ ना करने तथा धन का उपभोग त्यागपूर्वक करने का उपदेश दिया गया है।[5] स्मृतिकारों ने भी जीवन में अर्थ को आवश्यक मानते हुए धर्म के आधार पर अर्थ की विवेचना की है तथा धन की तीन विधियां बताई है- रक्षण, वर्धन तथा भोग।[6] वाल्मीकि रामायण में अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार वार्ता अर्थात कृषि, पशुपालन तथा व्यापार थे। जिनमें कृषि कार्य को

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

राजा का विशेष प्रोत्साहन प्राप्त होता था। रामायण में उर्वर भूमि को अदेवमातृक कृषि भूमि कहा गया है I वाल्मीकि ने अर्थ को प्राथमिक व प्रशंसनीय जीवन का लक्ष्य बताया है। जिस प्रकार पर्वत से नदियां प्रवाहित होती है उसी प्रकार समृद्ध एवं प्रबुद्ध धन से ही सभी क्रियाएं संपन्न होती है।[7] महर्षि वेद व्यास ने अर्थ को 'साधन' माना है । अर्थ विवेकशील होने पर ही 'अर्थ' रहता है अन्यथा 'अनर्थ' हो जाता है I अत: धन का अर्जन नैतिकता से युक्त न्यायोचित होना चाहिएI इसके लिए व्यक्ति का उद्यमी होना आवश्यक है–

विद्या तपो वा विपुलं धनं वा सर्वमेतद् व्यवसायेन शक्यम् I [8]

अर्थ के महत्व के कारण ही प्राचीन काल से ही मनुष्य अर्थ प्राप्ति के लिए प्रयास करता रहा है। प्राचीन काल में कृषि, पशुपालन व उद्योग अर्थोपार्जन के प्रमुख स्रोत थे। वैदिक काल में कंदमूल, फल तथा स्वत: उगा हुआ धान ही लोगों का भोजन होता था। धीरे–धीरे वैदिक आर्यों ने खेती करना प्रारंभ किया तथा पृथ्वी, इंद्र, पर्जन्य तथा सीता आदि देवताओं की कल्पना कर उनकी स्तुतियां करने लगे ।[9] महाभारत में महर्षि वेद व्यास ने धान और खानों से युक्त भूमि का विश्लेषण करते हुए बताया है कि खानों से कोष मात्र बढ़ता है परंतु धान्य से कोष्ठ व कोष्ठागार भरता है ।[10] इस प्रकार प्रारंभ से ही कृषि अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार रहा है, क्योंकि विभिन्न प्रकार के उद्योग व्यापार व शिल्प कलाओं के लिए कच्चे माल की आपूर्ति कृषि से ही संभव होती है। वैदिक काल में पशु पालन भी किया जाता था। ब्राह्मण ग्रंथों में 'गवय' नामक पशु का उल्लेख है, जो संभवत: बैल की भांति होता था ।[11] रामायण और महाभारत में भी अनेकश: गोपालन व गोदान का उल्लेख मिलता है। जिससे स्पष्ट होता है कि पशुपालन भी जीवन निर्वाह हेतु किया जाता था I क्योंकि पशुओं के द्वारा उनके भोजन, व्यवसाय, यातायात, युद्ध आदि कृत्य पर्याप्त रूप से प्रभावित होते थे I कृषि व पशुपालन के अतिरिक्त वाणिज्य–व्यापार प्राचीन अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार था। अथर्ववेद में दर्श (वस्त्र), पवस्त (चादर) और अजि (चर्म) के क्रय – विक्रय का उल्लेख है।[12] पुराणों में श्राद्ध पक्ष में रजत दान करना पवित्र माना गया है।[13] महाभारत काल में मिश्रित धातु का प्रयोग प्रारंभ हो गया था। मिश्रित धातुओं से कवच व अस्त्र–शस्त्र बनाए जाने लगे जो कि अभेद्य होते थे I[14] इससे स्पष्ट है कि प्राचीन काल में भारत में अनेक उद्योग–धंधों का विकास हो चुका था I इन सबके अतिरिक्त राज्य की आय का प्रमुख स्त्रोत 'कर' था। जो कि राजा को दिया जाता था। यह 'कर' विभिन्न रूपों में प्राप्त होता था I जैसे युद्ध में विजय होने पर प्राप्त संपत्ति, उद्योगों से होने वाली आय पर लगाया गया कर, दंड के रूप में प्राप्त धन, कृषि द्वारा उत्पन्न फसल पर लगाया गया कर आदि । राजा को प्राप्त होने वाली यह आय शास्त्र सम्मत व धर्म सम्मत मानी जाती थी और राजा इसे वेतन के रूप में स्वीकार करता था I[15] इस प्रकार प्राचीन काल में आय के विभिन्न स्रोत थे।

मारवाड़ के शिलालेखों में आर्थिक चिंतन – मारवाड़ से प्राप्त शिलालेखों से तत्कालीन आर्थिक स्थिति का अच्छा ज्ञान प्राप्त होता है। कृषि, पशुपालन तथा उद्योग धंधे आय का प्रमुख स्रोत होते थे। इनमें भी कृषि आर्थिक जीवन का प्रमुख आधार थी I प्राय: सभी वर्णों के लोग कृषि करते थे। भूमि के प्रकार तथा सिंचाई के साधनों के अनुसार राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग प्रकार की फसलें होती थी । राजस्थान में मुख्य रूप से ज्वार, बाजरा, मोठ, जौ, गेहूं, चावल आदि फसलें उगाई

जाती थी लेकिन मारवाड़ क्षेत्र रेगिस्तानी प्रदेश होने के कारण यहां पर ज्वार, सरसों, जौ और बाजरा प्रमुख रूप से उगाए जाते थे I

शिलालेखों में सियालू (सर्दी) तथा उनालू (गर्मी) की फसलों का उल्लेख मिलता है तथा प्रत्येक अरघट से एक आढ़क गेहूं व जौ, मूंग, दाल आदि के प्रत्येक द्रोण पर एक माणक 'कर' दिए जाने का उल्लेख है।[16] सेवाड़ी अभिलेख में मंदिरों में दान हेतु विभिन्न गांवों से प्रत्येक रहट से एक हारक अर्थात एक डलिया के बराबर यव (जौ) प्रदान किए जाने का वर्णन है।[17] सांडेराव पाषाण लेख के अनुसार महावीर स्वामी के कल्याण महोत्सव हेतु श्री कल्हणदेव की माता ने राजकीय भोग से एक हाइल ज्वार प्रदान की । इसी उत्सव के लिए रथकार धनपाल आदि ने भी ज्वार का एक हाइल अर्पित किया। इससे ज्ञात होता है कि सार्वजनिक उत्सवों में सामान्य जनता भी दान दिया करती थी I[18] लालराई से प्राप्त अभिलेख में बाली तथा आसपास के गांवों से यव तथा अरहट से पैदावार का कुछ भाग गूजरी यात्रा निमित्त देने का उल्लेख है। इस लेख के अनुसार नाडोल के शासक कल्हणदेव तथा उनकी रानी श्री महिदेवी ने ग्राम पंचों के समक्ष रथ यात्रा उत्सव के निमित्त एक हारक यव प्रदान की।[19]

मारवाड़ में मंदिरों के रखरखाव व पुजारियों के जीवन यापन हेतु दान के अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के कर दिए जाने का उल्लेख भी कई शिलालेखों में प्राप्त होता है। 996 ई. के हस्तीकुंडी अभिलेख से ज्ञात होता है कि वहां के शासक विदग्ध ने अपने गुरु वासुदेव की प्रेरणा से हस्तीकुंड में एक जैन देवालय का निर्माण करवाया तथा मंदिर की व्यवस्था के लिए अनेक प्रकार के कर निर्धारित किए। जैसे 20 बोझों पर, गाड़ी तथा ऊंट के भार पर तथा ऊंट पर ₹1 लिया जाता था। जुआरियों, पान बेचने वाले और तेल विक्रेताओं से एक 'कर्ष' वसूला जाता था। सिर पर उठाए जाने वाले एक बोझ की बिक्री पर एक 'विन्शपक' तथा सूती कपड़े, तांबा, केसर के भार पर 10 'पल' सरकारी कर लगाया गया था। इसके अतिरिक्त कुम्हारों के व्यवसाय पर भी कर लगाया जाता था।[20] गुहिल वंश के शासक राजदेव ने नेमीनाथ मंदिर की पूजा के निमित्त नारलाई में आने वाले लगे हुए वृषभों पर लिए जाने वाले कर का दशमांश निर्धारित किया ।[21] इसी प्रकार मारवाड़ के महाराजा जयसिंह के सामंत अश्वक द्वारा देवी के मंदिर में पूजा के निमित्त चार द्रम्म दिए गए तथा अन्य व्यक्तियों व अरहटों से भी एक-एक द्रम्म दिलाया गया ।[22]

मारवाड़ से प्राप्त अभिलेखों से ज्ञात होता है कि यहां पर मंदिरों व ब्राह्मणों को भूमि दान करने की प्रथा प्रचलित थी। अमृतपाल देव के जोधपुर से प्राप्त एक ताम्रपत्र वि.सं. 1242 में पुरोहित पाल्हा, ज्योतिषी यश देव, पंचकुल महिदिग, सेठ साहूकारों, ग्राम निवासियों तथा अमात्यों को भूमि दान की सूचना का उल्लेख है। सांडेराव अभिलेख में कुछ रथकारों द्वारा एक 'हल' भूमि का दान किया गया I दुर्लभराज चालुक्य के शासनकाल में तंत्रपाल क्षेमराज ने क्षत्रियपद ग्राम ब्राह्मण नाणक को दान में दिया था।[23]

वि.सं. 900 के प्रतिहार भोजदेव के दौलतपुरा ताम्र अभिलेख से विदित होता है कि वत्सराज ने 'सिव' ग्राम भट्ट वासुदेव को दान में दिया तथा इसकी सूचना सभी ग्रामवासियों तथा पड़ोस के गांव को भी दी गई और उन्हें आदेश दिया गया कि वह 'सिव' ग्राम का राजस्व दान पाने वालों को दें। इसी प्रकार जोधपुर से प्राप्त दानपत्र में परम भट्टारक महाराजाधिराज

श्री मूलराजदेव द्वारा अपने पूर्वजों के पुण्य और यश वृद्धि हेतु सांचौर मंडल के वर्णक ग्राम का दान वृक्षों, काष्ठ, तृण तथा जल पर अधिकार सहित दीर्घाचार्य ब्राह्मण को देने तथा इसकी सूचना ब्राह्मणों, राज पुरुषों तथा अन्य संबंधित व्यक्तियों को देने का विवरण प्राप्त होता है।[24] नाडोल के महाराजाधिराज कलहणदेव ने वृक्षों सहित एक कुआं नारायण नामक ब्राह्मण को दान में दिया।[25]

इस प्रकार मारवाड़ में भूमि दान, अन्न दान तथा विभिन्न प्रकार के कर मंदिरों की आय का प्रमुख स्रोत होते थे। उनसे मंदिर संबंधी सभी व्यवस्थाएं कुशलतापूर्वक संचालित होती रहती थी। ब्राह्मण भी आजीविका हेतु प्राप्त दान से अपना जीवन यापन करते हुए कर्त्तव्यों का निर्वहन किया करते थे। इसी कारण मारवाड़ के अनेक अभिलेखों में कहा गया है कि जो दान की गई भूमि का हरण करता है या वस्तु को वापस लेता है तो वह गौ हत्या तथा ब्रह्म हत्या के समान पाप का भागी होता है तथा दान की अवहेलना करने वाला एक हज़ार गाय तथा सौ ब्रह्म हत्या के पाप का भागी होता है।[26]

मारवाड़ में पशुपालन भी आय का प्रमुख स्त्रोत था। पशुपालन से गांव में दूध, दही, घी, ऊन आदि का भी उत्पादन किया जाता था। पशुओं का उपयोग व्यापार हेतु माल लाने- लेजाने के लिए भी किया जाता था। पशुओं का क्रय-विक्रय भी किया जाता था। घोड़े के विक्रय पर एक द्रम्म शुल्क लिया जाता था।[27] नाडोल के सोमेश्वर मंदिर से प्राप्त 1141 ई. के लेख के अनुसार भाट उस समय घोड़ों का उपयोग माल ढुलाई के लिए करते थे साथ ही घोड़ों का व्यापार भी करते थे। जबकि बंजारे बैलों पर लाद कर सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते थे। ओसियाँ के लेख से ज्ञात होता है राज भवनों में हाथी भी सुशोभित होते थे।

12 वीं शताब्दी के किराडू लेख में पशुवध निषेध की आज्ञा आल्हनदेव के द्वारा जारी की गई थी I माह की दोनों पक्षों की अष्टमी, एकादशी तथा चतुर्दशी को पशुवध निषेध कर दिया गया तथा सामान्य प्रजा के साथ-साथ पुरोहितों और सामंतों को भी इसके लिए पाबंद कर दिया गया I आज्ञा के उल्लंघन करने पर साधारण नागरिक पर पांच द्रम्म तथा राज परिवार पर एक द्रम्म दंड निर्धारित किया गया।[28] किराडू के इस लेख से तत्कालीन शासन व्यवस्था में मानवता, नैतिकता तथा पशुओं के प्रति दया का भाव दिखाई देता है। दंड व्यवस्था में राज परिवार से एक द्रम्म तथा साधारण प्रजा से पांच द्रम्म वसूलने की व्यवस्था से राज परिवार का विशेषाधिकार स्पष्ट होता है। 13वीं शताब्दी में बाड़मेर व्यापारिक केंद्र था। वहां से ऊँट, घोड़े, बैल आदि माल लेकर गुजरते थे। आदिनाथ मंदिर की व्यवस्था के लिए सभी महाजनों ने इन पर कर देना स्वीकार किया था।[29]

पशुपालन के अतिरिक्त अन्य उद्योग धंधे भी मारवाड़ में आय के प्रमुख स्त्रोत थे। मारवाड़ से प्राप्त अभिलेखों में अनेक स्थानों पर घाणक का उल्लेख है जिससे स्पष्ट होता है कि मारवाड़ में तेल का व्यापार किया जाता था। उदाहरणार्थ पाली के नारलाई के महावीर मंदिर का लेख 1130 ई. के अनुसार महावीर मंदिर के निमित्त घाणक तेल से चौहान पतरा के पुत्र बिसरा ने कलश के नाप का तेल अनुदान में दिया। नारलाई के ही 1132 ई. के चौहान रायपाल देव के अभिलेख में प्रति घाणक से दो पल्लीका तेल बाहर से आने वाले जैन संतों को दिए जाने का आदेश है तथा इसका उल्लंघन करने वाले के लिए गौ हत्या तथा ब्राह्मण हत्या का पाप बताया गया है। नमक का व्यापार भी मारवाड़ की आय का प्रमुख स्त्रोत थाI डीडवाना,

फलोदी, पचपदरा, सांभर आदि खारे पानी की झीलों से भारी मात्रा में बढ़िया किस्म का नमक उत्पादित होता था तथा नमक के प्रत्येक कूटक पर मंदिर के निमित्त एक विंशोपक दिया जाता था ।[30]

राजस्थान खनिजों का भंडार कहा जाता है I इस दृष्टि से मारवाड़ क्षेत्र भी खनिजों से समृद्ध क्षेत्र है। यहां नागौर में तांबे की बड़ी–बड़ी खाने हैं। एक अभिलेख में तांबे के भार पर 10 पल राजकीय कर लिए जाने का उल्लेख है जिससे इस क्षेत्र में तांबे के उत्पादन का ज्ञान होता है।[31] इसके अतिरिक्त जालौर और सोजत की खानों से जस्ते का उत्पादन भी किया जाता था। अभिलेखों में सूत, ऊन, स्वर्णाभूषणों के व्यापार तथा कपड़ा उद्योग का उल्लेख भी मिलता है I मारवाड़ में स्वर्ण आभूषणों का निर्माण प्रचुरता से होता थाI स्वर्णकार अत्यंत प्रवीण होते थे। कल्याणपुर सातवीं सदी तथा नवी सदी के घटियाला के अभिलेखों के उत्कीर्णक स्वर्णकार ही थे। घटियाला अभिलेख के अनुसार प्रतिहार शासक कक्कूक के शासन काल में घटियाला व्यापार व वाणिज्य का प्रमुख केंद्र था तथा यहां पर मरु, माड़, वल्ल, तमनी, अज्ज तथा गुर्जरत्रा के व्यापारी आकर बस गए थे।[32]

उद्योग धंधों के अतिरिक्त निर्माण कार्य भी आय का स्रोत होते थे। मारवाड़ रेगिस्तानी प्रदेश होते हुए भी यहां के शासकों ने बहुतायत में मंदिरों, दुर्गों, बावडियों इत्यादि का निर्माण करवाया जिससे जनता को रोजगार प्राप्त होता था। अभिलेखों के अनुसार मारवाड़ के नाडोल क्षेत्र के शासक आल्हनदेव ने नाडोल में शिवालय का निर्माण करवाया। कल्हण ने स्वर्ण तोरण द्वार बनवाकर ख्याति प्राप्त की। समर सिंह ने जालौर में गढ़ का निर्माण करवाया।[33] जोधपुर से 20 मील उत्तर में घटियाला गाँव के 861 ई के दो लेखों के अनुसार मंडोर के प्रतिहार शासकों ने मंडोर दुर्ग का ऊंचा प्रकार बनवाया। राजाओं और सामंतों की भांति सामान्य लोग भी सार्वजनिक निर्माण करवाने में रुचि लेते थे। मंडोर की एक बावड़ी से प्राप्त वि.सं. 742 के अभिलेख से ज्ञात होता है कि ब्राह्मण चाणक के पुत्र माधू ने इस बावड़ी का निर्माण करवाया था। नारलाई में भिवडेश्वर के मंदिर के मंडप का निर्माण सूत्रधार महुआ व उसकी पत्नी जसदेवी के पुत्र पाहिणी ने करवाया जिसमें पत्थरों व ईंटों का प्रयोग किया गया तथा 330 द्रम्मों का व्यय हुआ।[34] इससे शिल्पकार्य में होने वाले व्यय का ज्ञान होता है। किन्तु निर्माण कार्य करने वाले श्रमिकों को कितना पारिश्रमिक दिया जाता था यह अभिलेखों में वर्णित नहीं है I

अभिलेखों से नाप–तौल संबंधी सूचनाएं भी प्राप्त होती है। बीजापुर के वि.सं. 1053 के लेख से नाप–तौल हेतु पल, कर्ष, आढ़क, मानक, द्रोण, कलश, हाएल आदि विभिन्न मापों का ज्ञान होता है। मंडोर के केशव मंदिर को एक कर्ष तेल दिया जाता था। नारलाई में प्रत्येक घाणक से दो पल्लीका तेल बाहर से आने वाले जैन संतों को दिया जाता था।[35] ओसियां के सच्चियाय माता मंदिर में भोजक को पारिश्रमिक के रूप में देवी के कोषागार से प्रतिदिन दो अंजुल मूंग व एक कर्ष दिया जाता था I अभिलेखों से ज्ञात होता है कि वर्तमान की भांति उस समय में ब्याज पर ऋण भी दिया जाता था। ब्याज मुद्रा व वस्तु दोनों रूपों में लिया जाता था। भीनमाल से प्राप्त अभिलेख के अनुसार जगत स्वामी मंदिर के कोष्ठागार को 40 द्रम्म पर 12 द्रम्म वार्षिक ब्याज के रूप में मिलते थे। इससे ब्याज की दर 30% वार्षिक होना ज्ञात होती है। वि.सं. 1306 के भीनमाल में एक अन्य अभिलेख के अनुसार 40 द्रम्म के वार्षिक ब्याज के रूप में निम्न वस्तुएं प्राप्त होती थी– गेहूं 2 सेई, मूंग 1 मण, चोखा (चावल) दो पायली, घी साढ़े आठ कलश, पूजा सामग्री सात द्रम्म मूल्य की I उपयुक्त वस्तुओं के मूल्यों

के आधार पर दशरथ शर्मा ने साढे 33% की ब्याज तक की दर मानी है। जोकि मध्यकालीन मारवाड़ में ऊंची ब्याज दर को दर्शाता है।[36] इस प्रकार मारवाड़ के शिलालेखों के अध्ययन से तत्कालीन आर्थिक व्यवस्था के विभिन्न पक्षों यथा कृषि, व्यापार, वाणिज्य, उद्योग–धंधों, दान, कर, मुद्रा तथा निर्माण कार्यों के विषय में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध होती है I

सन्दर्भ

1. ऋग्वेद 1.1.1
2. अथर्ववेद 12.16
3. ऋग्वेद 10.34.13
4. तैत्तिरीयोपनिषद 1.4
5. ईशावास्योपनिषद, प्रथम मंत्र
6. नारद स्मृति 1.39
7. वाल्मीकि रामायण 6.83.32
8. महाभारत, शांतिपर्व 120.45
9. ऋग्वेद 1.117.21
10. महाभारत, सभा पर्व 5.61
11. शतपथ ब्राह्मण 1.2.3.9
12. अथर्ववेद 4.7.6
13. विष्णु पुराण 3.15.52
14. महाभारत, द्रोणपर्व 94.39
15. वही,शांति पर्व 72.10
16. फलोदी से प्राप्त वि.सं. 1236 का अभिलेख
17. सेवाड़ी के महावीर मंदिर का 1090 ई. का अभिलेख
18. सांडेराव पाषाण लेख 1164
19. बाली के निकट लालराई के शांतिनाथ मंदिर का 1176 ई. शिलालेख
20. उदयपुर सिरोही मार्ग पर एक द्वार पर स्थित हस्तीकुंडी अभिलेख, शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान के इतिहास के स्त्रोत, पृष्ठ 68
21. नारलाई से प्राप्त 1138 ई. का अभिलेख
22. पाली जिले में 1143 ई.का बाली के बोला माता मंदिर का स्तंभ लेख

23. वि.सं. 1069 का जोधपुर ताम्रपत्र

24. वि.सं. 1051 का बालेरा, जोधपुर से प्राप्त दान पत्र

25. वि. सं. 1223 के जोधपुर, बाणनेरा से प्राप्त अभिलेख

26. पाली, नारलाई का लेख 1132 ई.

27. बाली का लेख 1143 ई.

28. किराडू का 1152 ई. का शिलालेख

29. जूना, बाड़मेर के आदिनाथ मंदिर का लेख 1295ई.

30. गोपीनाथ शर्मा, राजस्थान का इतिहास, पृ.494

31. वि.सं. 1053 का हस्ती कुंडी अभिलेख

32. शर्मा, गोपीनाथ, राजस्थान के इतिहास के स्त्रोत–भाग 1, पृ.57

33. जोधपुर के जसवंतपुरा गांव से 10 मील की दूरी पर स्थित सुंधा पर्वत का शिलालेख 1262 ई.

34. पाली के नारलाई में महावीर मंदिर का लेख 1171 ई.

35. व्यास, श्यामप्रसाद, राजस्थान के अभिलेखों का सांस्कृतिक अध्ययन, पृ.161

36. शर्मा, दशरथ, अली चौहान डायनेस्टी पृष्ठ 336–37